(रविवार, २३-१२-२०१८)(हिन्दी)

ॐ

तुलसीपत्र-१५७७

सुनत बिनीत बचन अति कह कृपाल मुसुकाइ।
जेहि बिधि उतरै कपि कटकु तात सो कहहु उपाइ।।३३४।।

(अर्थ : समुद्र के अत्यन्त विनम्रतापूर्ण वचनों को सुनकर कृपालु श्रीराम ने हँसकर कहा, ''हे तात! ऐसा कोई उपाय बताइए, जिससे कि वानरों की सेना समुद्र को पार कर जा सके।'')

देवर्षि नारद ने बड़े ही विनम्रताभाव के साथ आकाश की ओर देखते हुए हाथ जोड़े, ''मैंने जगत् को भक्तिसूत्र बताये, वह भी केवल स्वयंभगवान के प्रेम की वर्षा के कारण ही

और आज तुम जैसे सभी श्रेष्ठजनों को भक्तिभाव चैतन्य का सुस्पष्ट अर्थ बता रहा हूँ, वह भी केवल उसी के कारण।

भक्तिभाव चैतन्य अर्थात् स्वयं स्वयंभगवान का होकर रहना और 'वह (स्वयंभगवान) मेरे साथ सदैव है' इसका एहसास रखना।

अर्थात्

वास्तविक भगवत्-ज्ञान

और

वास्तविक भगवत्-भान (भान=एहसास)

सच्चिदानंद अर्थात् सत्, चित्, आनंद स्वरूप परमेश्वर दत्तगुरु, आदिपिता सहजशिव नारायण और आदिमाता जगदंबा नारायणी इन त्रि-नाथों का समूचे विश्व को व्याप्त करने वाला और भक्तों के जीवन में सर्वत्र भरकर रहने वाला 'जीवित आनंद' ही है स्वयंभगवान, अर्थात् त्रिविक्रम यानी त्रि-नाथों का आनंद।

त्रिविक्रम और स्वयंभगवान ये दो शब्द एकरूप ही हैं।

इस स्वयंभगवान का जो रूप हमें अच्छा लगता हो, उस रूप के साथ स्वयं को जोड़ना और उस रूप के साथ स्वयं को अधिक से अधिक जोड़ते रहना ही भक्तिभाव चैतन्य है।

यह भक्तिभाव चैतन्य और उसका मूल स्रोत ये दोनों भी अथाह और अनिरुद्ध हैं यानी जिनकी गति को कोई भी जान नहीं सकता है और जिनकी गति को कोई भी रोक नहीं सकता है ऐसे।

राम, हरि, हर, हरिहर, कृष्ण, शिव, ईश्वर, सर्वेश्वर अथवा जो अन्य कोई भी नाम तुम्हें पसंद हो, उस नाम से तुम उसे पुकार सकते हो। परन्तु कलियुग के उसके अवतार का उसका समर्थ नाम यह अधिक विशेष है।

भक्तिभाव चैतन्य में रहना यह कोई कड़े और कठोर तथा कष्टदायक नियमों का मार्ग नहीं है, बल्कि भक्तिभाव चैतन्य यह भगवान से शुद्ध और जीवित रिश्ता कायम रखने का मार्ग है – इस मार्ग पर जो कुछ करना है, वह केवल प्रेम से ही।

किसी भी नियम को बनाना और उसका पालन करना, वह भी प्रेम से ही।

अपना जीवन व्यतीत करते हुए भगवान के लिए कई बातें करते रहना और अपने हाथों हुए सारे के सारे कर्मों को भगवान के चरणों में अर्पण करते रहना यही भक्तिभाव चैतन्य का एकमात्र नियम है।

इस भक्तिभाव चैतन्य में 'स्वयंभगवान का मंत्रगजर' यह सर्वोच्च मंत्र माना जाता है। क्योंकि इसकी रचना दत्तभगिनी शुभात्रेयी द्वारा की गयी है और कई कल्पों में घटित हुए रामायण जिन्होंने सामान्य लोगों को बताये हैं, उन याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी ने मेरे साथ ही इस गजर को करते हुए आनंदनृत्य किया है।

इस मंत्रगजर से भक्तिभाव चैतन्य की लहरें उठती रहती हैं और जिस किसी को स्वयं का जीवन उत्तम बनाना है, उसे सभी बातों की आपूर्ति की जाती है।

प्रत्यक्ष माता शुभात्रेयी ने मुझसे कहा है कि, 'जो श्रद्धावान इस मंत्रगजर की प्रतिदिन १६ मालाएँ (जाप करने की माला में १०८ मणि होते हैं, इस प्रकार एक माला करना यानी १०८ बार जाप करना यह इसका अर्थ है), कम से कम ३ वर्षों तक करता है, उस श्रद्धावान के विशुद्ध चक्र के (कंठकूप चक्र के) सभी के सभी सोलह दल शुद्ध हो जाते हैं अर्थात् उसका विशुद्ध चक्र 'हनुमत् चक्र' बन जाता है। फिर किसी भी जन्म में वह सुख से जन्म लेता है, आनंद से जीवन व्यतीत करता है और आनंद में ही विलीन हो जाता है।'

जिसे प्रतिदिन १६ मालाएँ करना संभव नहीं होगा, वह अपनी क्षमता के अनुसार 'गिनती न करते हुए' (जाप की गिनती न करते हुए) इस मंत्रगजर को करता रहे और उस जाप को 'उस'के चरणों में अर्पण करता रहे – इस प्रकार से करने वाले श्रद्धावान का जीवन भी सुंदर होता ही रहेगा।

स्वयंभगवान का स्पर्श जिसे होता है, वह वस्तु, पदार्थ, व्यक्ति अपने आप ही पवित्र हो जाते हैं और इस बात के लिए अपवाद (एक्सेप्शन) नहीं है।

यह स्वयंभगवान प्रेमल और कृपालु है, ऐसा दृढ विश्वास रखकर ही जाप करो, इसकी प्रतिमा का पूजन करो, इसकी पादुका का अर्चन करो, इसके चरणों की ओर देखते रहो, इसके मुख की ओर देखते हुए इसकी सुंदरता का पान करते रहो, इसकी मूर्ति को अर्थात् अर्चनविग्रह को 'जीवित भगवान' मानकर सभी प्रकार से सेवा करो और केवल इसे अच्छा लगता है, इसलिए वास्तविक ज़रूरतमंद श्रद्धावानों की सहायता करो, यह भी भक्तिभाव चैतन्य ही है।

यह स्वयंभगवान, देवाधिदेव, त्र्यंबकराज ही अनंतकोटि ब्रह्माण्डों का और इसी लिए मेरा भी पालन करनेवाला और उद्धारक है, यह प्रतिदिन अपने मन को बताते रहो; क्योंकि मन चंचल होता है, उसे प्रतिदिन बताते रहना ज़रूरी होता है।

यह स्वयंभगवान देवाधिदेव प्रेमस्वरूप, नित्यतृप्त, सर्वज्ञ, सर्वगामी एवं सर्वसमर्थ है, इसका अनुभव भक्तिभाव चैतन्य में ही होता है।

हे पवित्र शुभदा! इससे प्रेम करने जैसी दूसरी कोई पवित्र बात नहीं है।

लाखों सेवाएँ कीं, बड़े बड़े कार्यों का निर्माण किया, समाज में लोकप्रिय रहने वाले सभी नियमों का उत्कृष्ट रूप से पालन किया; परन्तु इससे प्रेम नहीं किया, इसकी सेवा नहीं की, तो वे सारे कर्म पीड़ादायक ही साबित होते हैं।

भक्तों की पुकार को तत्काल (उसी पल) सुनकर, उसी पल कार्य करने में जुट जानेवाला समर्थसेतु यह एक ही है।

यह देवाधिदेव बहुत ही सरल, आसान, सहजता से विचरण करने वाला, अकड़ (शान) न दिखाने वाला, अपनी महानता को औरों पर न लादने वाला, स्वयं के द्वारा किये गये उपकारों का औरों को स्मरण तक न दिलाने वाला और केवल बिना कुछ कहे प्रेम करते रहने वाला है

और इसी लिए हमें इससे बातें करनी चाहिए – बार बार, जब हम चाहे तब, जहाँ हम चाहे वहाँ, यहाँ तक कि इसकी प्रतिमा भी सामने न होते हुए, बिना किसी कारण के भी,

मन ही मन में बातें करो – इसकी प्रतिमा के सामने मुख से बातें करो – एकांत में बातें करो – लेकिन बातें करते रहो। क्योंकि अपने भक्तों के शब्दों को सुनना इसे बहुत पसंद है।

श्रद्धावानों की भक्ति से भरी हुई बातें इस देवाधिदेव के कानों को सर्वोत्तम और सर्वोत्कृष्ट अमृत से भी मधुर प्रतीत होती है।

'हे देवाधिदेव! हे स्वयंभगवान! हे मेरे भगवान! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, मेरी निष्ठा तुम्हारे चरणों में है' इसका उच्चारण करते हुए अपने आप श्रद्धावानों के जीवन की अनेक घातक बातें और पाप दूर होते रहते हैं।

स्वयंभगवान मुझसे प्रेम करता है या नहीं, ऐसा विचार करना ही सबसे बड़ा पाप है।'

(जारी है)